**ओ३म्**

**‘गोमाता विश्व की पूजनीय क्यों है?’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

संसार में जड़ व चेतन दो प्रकार के पदार्थ है। चेतन पदार्थ भी दो व दो प्रकार के हैं। प्रथम ईश्वर जिसने इस सृष्टि को रचा है और दूसरे चेतन पदार्थ जीवात्मायें हैं जो सूक्ष्म, अनादि, अविनाशी, अमर, नित्य, एकदेशी, अणुमात्र, ज्ञान व कर्म की सामर्थ्य से युक्त, ससीम व अल्पज्ञ है। ज्ञान व गति यह दो मुख्य स्वाभाविक गुण जीवात्मा के हैं। संसार में जीवात्माओं की संख्यायें अनन्त हैं। ईश्वर की दृष्टि में जीवात्माओं की संख्या उसको ज्ञात होने से सीमित कह सकते हैं। जीवात्मा का स्वरूप जन्म व मरण धर्मा है। जीवात्मा को जन्म इसके पूर्व जन्मों के कर्मानुसार ईश्वरीय व्यवस्था से मिलता है। जब किसी जीवात्मा की मनुष्य योनि में मृत्यु होती है तो उसे अपने कर्मों के सुख व दुःखी रूपी फलों को भोगना होता है। परमात्मा उनके कर्मानुसार उसे मनुष्य व इतर पशु आदि योनियों में जन्म देता है जिससे वह अपने किये हुए पूर्व कर्मों का यथोचित, न कम न अधिक, फल भोग ले। हम सब जानते हैं कि पशुओं में गाय भी एक पशु है। वैदिक धर्म में गाय को विश्व की माता कहा है जो कि उसके गुणों, मनुष्यों व प्रकृति को होने वाले लाभों की दृष्टि से उचित ही है। सृष्टि के आरम्भ से ही गो सभी मनुष्यों को अपने दुग्ध से पुष्ट व पोषित करती आ रही है। जिस प्रकार जीवात्मा का माता के गर्भवास में उसके भोजन व रूधिर आदि से शरीर बनता है, उसी प्रकार से हमारा शरीर भी अन्न व फलों सहित गोमाता के गोदुग्ध से बना हुआ है। अन्न व फलों की तुलना में गोदुग्ध अल्प प्रयास से प्रचुर व आवश्यक मात्रा में सुलभ हो जाता है और गुणवत्ता में भी यह सर्वश्रेष्ठ होने से इसकी दात्री गोमाता पूजनीय एवं वन्दनीय हो जाती है।

 मनुष्य जीवन की आवश्यकताओं में प्रमुख आवश्यकता भोजन ही है। यदि उसे भोजन प्राप्त न हो तो भोजन से प्राप्त होने वाली शक्ति के अभाव में वह कुछ काम नहीं कर सकता। अन्न, फलों, वनस्पतियों व सब्जियों सहित गोदुग्ध का अपना अपना महत्व है। अलग अलग प्रकार के अन्न से शरीर को अलग अलग प्रकार के पौष्टिक तत्व प्राप्त होते हैं परन्तु गोदुग्ध पूर्ण आहार है जिसका सेवन करने से, यदि अन्न व फल आदि न भी मिले तो भी, मनुष्य न केवल जीवित ही रहता है अपितु निरोग रहते हुए जीवन के सभी कार्य कर सकता है। गो माता की सन्तानें जिस प्रकार आरम्भ में गोदुग्ध पर पूरी तरह से निर्भर होती हैं और उनका विकास भलीभांति होता है, इसी प्रकार गोदुग्ध से मनुष्य भी भोजन के सभी प्रकार के तत्वों को प्राप्त कर स्वस्थ व शक्तिशाली बनता है। गोदुग्ध के इसी गुण के कारण वेदों ने गो की महिमा का बखान किया है जिससे मनुष्य उसे जानकर गोपालन व गोसेवा करके सुखी स्वस्थ जीवन व लम्बी आयु प्राप्त कर सके। गोदुग्ध का सेवन करने वालों में रोगों से लड़ने की अद्भुत शक्ति होती है। वह कभी रूग्ण नहीं होते और यदि हो भी जायें तो शीघ्र ही स्वस्थ हो जाते हैं। गोदुग्ध अमृत के समान महोषधि है जो निरोग रखने व रोगों को दूर भगाने में लाभप्रद होती है। गोदुग्ध से अनेक स्वादिष्ट, स्वास्थ्यप्रद व शक्तिवर्धक पदार्थ दधि, मक्खन, मट्ठा, घृत, पंचगव्य आदि पदार्थ बनते हैं। गोघृत से अग्निहोत्र करने से पर्यावरण शुद्ध रहता है व प्रदुषण दूर होता है। अनेक साध्य व अससाध्य कोटि के रोगों में भी गोघृत से अग्निहोत्र करने से लाभ होता है। वैदिक धर्म में अग्निहोत्र का दैनिक कर्तव्यों में विधान है। इससे अर्जित पुण्य से न केवल वर्तमान जीवन सुखदायक बनता है अपितु इसके फल से हमारा आगामी भावी पुनर्जन्म भी उन्नत व सुखी होता है।

 गोदुग्ध के साथ ही गोमूत्र भी औषधीय गुणों से समाविष्ट है। गोमात्र के सेवन से उदर कृमियों पर लाभकारी प्रभाव होने के साथ त्वचा आदि के अनेक रोग दूर होते हैं। खेती वा कृषि में खाद व कृमियों के नाश के लिए भी गोबर व गोमूत्र आदि का प्रयोग उपयोगी होता है। गोबर व गोमूत्र से बनी खाद स्वादिष्ट व स्वास्थ्यवर्धक अन्न उत्पन्न करने में सर्वाधिक लाभकारी होती है। रासायनिक खाद का प्रयोग करने से अनेक शारीरिक रोग होते हैं और इस पर धन भी बहुत व्यय होता है। गोबर से ग्रामीण अपनी झोपडीनुमा कच्चे निवासों में लेपन करते हैं जिससे स्वच्छता व शुद्धि सम्पदित होती है। गोबर के उपले बनाकर रसोई के लिए ईघन के रूप में प्रयोग किया जाता है। अन्य सभी प्रकार के ईधन वायु प्रदुषण करने के साथ भोजन पकाने वाले पर भी अपना दुष्प्रभाव डालते हैं जबकि गोबर का ईधन के रूप में प्रयोग अन्य ईघनों से कहीं ज्यादा सुरक्षित होता है। इससे जो धुआं होता है वह वनस्पतियों का सबसे अच्छा भोजन होता है। गोदुग्ध, गोमूत्र व गोबर आदि सभी पदार्थ अर्थ की दृष्टि से भी देश व परिवार के लिए बहुत लाभकारी सिद्ध होते हैं।

 गाय से बछिया या बछड़े होते हैं जो कृषि कार्यों सहित अनेक प्रकार से देश व समाज के लिए उपयोगी होते हैं। गाय अमृत के समान गोदुग्ध देती है जिसके बदले में हमें उसे मात्र प्रकृति में सर्वत्र सुलभ घास आदि वनस्पतियां ही खिलानी होती हैं। आज देश में एक श्रमिक प्रतिदिन 200 से 400 रुपये कमाता है। महीने में यदि उसने 20 दिन काम किया तो उसकी आय 4,000 से 8,000 रुपये ही होती है। इस आय से उसे अपने 5 या 7 परिवार जनों का पालन भी करना होता है और अपनी शारीरिक शक्ति को बनाये रखना होता है। ऐसी स्थिति में वह बाजार में 60 रुपये लिटर वाला दूध नहीं ले सकता। इस आय वाला व्यक्ति शहरों में किराये का एक कमरा भी नहीं ले सकता और न ही अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा दे सकता है। ऐसे में यदि किसी निर्धन परिवार में एक या दो गाय हों तो वह उससे दुग्ध की अपनी आवश्यकता पूरी करके शेष दूध को अन्यों में बेच कर अपना निर्वाह कर सकते हैं। इस दृष्टि से गाय का महत्व सर्वाधिक सिद्ध होता है। गाय माता से हमें बैल प्राप्त होते हैं जो खेत जोतने और कृषि के अनेक कार्यों सहित बैलगाड़ी में भी सामान ढोने के काम आते हैं। गाय से न केवल गोदुग्ध, गोबर व गोमूत्र ही प्राप्त होते हैं अपितु गाय की स्वाभाविक मृत्यु होने पर उसका चम्र भी हमारे पैरों की रक्षा करता है। इतने उपयोगी जीव वा पशु का प्रत्येक मनुष्य कितना ऋणी है वह वही व्यक्ति जान सकता है जिसकी आत्मा और संस्कार पवित्र हो। आजकल अंग्रेजी व पश्चिमी तौर तरीको वाली जीवन शैली ने मनुष्य के मन से अंहिसा व सम्वेदना जैसी पवित्र भावनाओं को काफी मात्रा में कम कर दिया है। यहीं कारण है कि पशुओं के प्रति देश व संसार में जो हिंसा होती है, उसका कहीं कोई विशेष विरोध नहीं करता।

मनुष्य मनुष्य तभी होता है जब वह अपना प्रत्येक कार्य सोच विचार कर अर्थात् सत्य व असत्य का विचार कर करे। जब हम गाय आदि पशुओं की बात करते हैं तो हमें उसके सुख व दुख पर भी ध्यान देना चाहिये। हमें कांटा लगता है तो हमें दुःख होता है। कोई हमारे प्रति हिंसा का कार्य करता है तो भी हमें दुःख होता है। यहां तक की अनेक लोग रूग्ण होने पर डाक्टर से इंजेक्शन लगाने में भी डरते हैं। अतः हमें कोई अधिकार नहीं है कि हम गाय वा किसी अन्य पशु का गला कांटे, उसकी हत्या करें व उसका मांस खाये। पशु हत्या व मांसाहार मानव स्वभाव के विपरीत कू्ररता है जिसका कारण अज्ञान व कुसंस्कार है। ऐसे लोग मनुष्य कहलाने योग्य नहीं है क्योंकि उनका कार्य मनन व सत्यासत्य का विचार कर नहीं हो रहा है। मांसाहारी लोगों से हम पूछना चाहते हैं कि जब परमात्मा के न्याय के अनुसार तुम्हें भी ऐसे ही कष्टों से गुजरना होगा तो तुम्हें कैसा लगेगा? इस प्रश्न पर शायद कोई विचार करना भी नहीं चाहेगा। परन्तु कर्मफल सिद्धान्त के अनुसार ऐसा होता है, ऐसा होगा, यह असम्भव नहीं है। **‘अवश्यमेव ही भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्’** के अनुसार हमारे प्रत्येक अच्छे व बुरे कर्म का उसी के अनुरूप, उतनी ही मात्रा में न कम और न अधिक सुख व दुख हमें मिलेगा जैसा हमने इस जीवन में दूसरों के प्रति किया है। जो लोग पशु हिंसा के कार्य में लगे हैं या जो मांस खाते हैं, वह इस पर अवश्य विचार करें। महर्षि मनु ने लिखा है कि मांसाहार की अनुमति देने वाला, पशु की हत्या करने वाला, मांस बेचने वाला, मांस पकाने वाला, मांस परोसने वाला और खाने वाला, यह सब बराबर पाप के भागी हैं। इन सभी लोगों को अपनी आगामी पुनर्जन्म पर अवश्य विचार करना चाहिये।

गाय देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द जी ने **‘गोकरुणानिधि’** नाम से एक पुस्तक लिखी है जिसमें गोरक्षा के महत्व सहित गाय से होने वाले आर्थिक लाभों का उल्लेख भी किया है। सत्यार्थप्रकाश के दशम् समुल्लास में भी गोरक्षा के लाभों का वर्णन है। महर्षि ने गणित से गणना करके सिद्ध किया है कि **एक गाय की एक पीढ़ी कुल दूध व बैलों से उत्पन्न अन्न से एक समय मे 3,99,760 लोगों का पालन होता है।** इससे गोरक्षण व गोसंवर्धन के महत्च का अनुमान लगाया जा सकता है। यही कारण था कि महाभारतकाल व उसके कुछ समय बाद तक हमारा देश वीरों व वेद ज्ञानियों की भूमि रहा है। यहां दूध की नदियां बहती थी। **स्त्री व पुरुष की एक सौ वर्ष की आयु होना आम बात थी। 100 से 160 व उससे भी अधिक आयु के लोग महाभारत काल में रहे हैं।** गाय की ही तरह बकरी की एक पीढ़ी के दूध से भी एक समय में 25,920 लोगों का पालन होता है। गाय व बकरी की ही तरह भैंस, हाथी, घोड़े, ऊंट, भेड़ व गधों से भी अनेक उपकार होते हैं। हमने गाय से कुछ थोड़े से ही लाभों का वर्णन किया है। गाय से होने वाले व्यापक लाभों पर देश में अनेक ग्रन्थ व पुस्तकें उपलब्ध हैं जिनका अध्ययन किया जाना चाहिये। लेख की समाप्ती पर महर्षि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश से कुछ विचार प्रस्तुत कर रहे हैं। वह लिखते हैं **‘इन गाय आदि पशुओं को मारने वालों को सब मनुष्यों की हत्या करने वाले जानियेगा। देखो ! जब आर्यों का राज्य था तब ये महोपकारक गाय आदि पशु नहीं मारे जाते थे, तभी आर्यावर्त वा अन्य भूगोल देशों में बड़े आनन्द में मनुष्यादि प्राणि वर्तते थे। क्योंकि दूध, घी, बैल आदि पशुओं की वृद्धि होने से अन्न रस पुष्कल प्राप्त होते थे। जब से विदेशी मांसाहारी इस देश में आकर, गो आदि पशुओं के मारने वाले मद्यपायी राज्याधिकारी हुए हैं, तब से क्रमशः आर्यों के दुःख की बढ़ती होती जाती है। क्योंकि ‘नष्टे मूले नैव फलं न पुष्पम्।’ जब (गोहत्या करके सुखरूपी) वृक्ष का मूल ही काट दिया जाय तो (फिर सुखरूपी) फल फूल कहां से हों।‘** **कोई मनुष्य कुछ भी व कितना भी कर लें वह ईश्वर, पृथिवीमाता व गोमाता के ऋण से जन्म-जन्मान्तरों में भी उऋण नहीं हो सकता।** ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**‘सन्ध्या ईश्वर की और अग्निहोत्र यज्ञ मुख्यतः जड़-चेतन देवताओं की पूजा है’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 ससार में केवल तीन ही सत्तायें व पदार्थ हैं ईश्वर, जीव व सृष्टि। हमें मनुष्य जन्म भी ईश्वर ने हमारे पूर्व जन्मों के अवशिष्ट कर्मों के अनुसार कर्मों का भोग करने के लिए प्रदान किया है। हमारे जीवन मे सुख व दुःख आते जाते रहते हैं। धर्म वा धार्मिक कार्यों का फल सुख व इसके विपरीत कर्मों व कार्यों का परिणाम दुःख होता है। मनुष्यों को तीन प्रकार के दुःख प्राप्त होते हैं। आधिदैविक, आधिभौतिक व आध्यात्मिक। अकाल, अतिवृष्टि, बाढ़, भूकम्प, अन्य प्राणियों तथा शारीरिक रोग ज्वर आदि से जो दुःख प्राप्त होते हैं वह इन तीन श्रेणियों में आते हैं। हम सभी दुःखों से बचना चाहते हैं और हमारी भावना होती है कि हमें सभी प्रकार के सुख प्राप्त हों और कोई दुःख प्राप्त न हो। संसार में मनुष्य ऐसे ऐसे दुःख भोगते हैं जिन्हें देखकर मन द्रवित व दुःखी हो जाता है। करोड़ों की संख्या में हमारे देश में ऐसे लोग हैं जिन्हें दो समय का पेट भर भोजन भी सुलभ नहीं है, अच्छे स्वादिष्ट भोजन की बात तो बहुत दूर है। यह देश की व्यवस्था की खामियों के कारण मुख्य रूप से है। बहुत से लोग रोगों से पीड़ित हैं परन्तु वह डाक्टर के पास जाने से भी डरते हैं। अतः साधारण व मध्यम वर्गीय लोगों के दुःखों की कोई सीमा नहीं है। ऐसे अनेकानेक दुःखों से बचने के लिए ही धर्म का पालन करने का विधान है। सत्य बोलने, धर्म वा वेद विहित कर्मों को करने से मनुष्य को सुख की प्राप्ति होती है। अतः ऐसा करके अधिकांश व सभी दुःखों से बचा जा सकता है। इसके लिए हमें अच्छे संस्कारों व वेदो के अध्ययन की आवश्यकता है। वेदाध्ययन बाल व किशोरावस्था में किसी आर्य गुरुकुल में प्रविष्ट होकर किया जा सकता है। युवावस्था व बाद में वेदाध्ययन के लिए सत्यार्थप्रकाश धर्मग्रन्थ सहित ऋषि दयानन्द के अन्य ग्रन्थों व वैदिक साहित्य का अध्ययन कर सत्य वैदिक मान्यताओं व सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए हमारे मन व हृदय में ईश्वर, वेद व आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रति पूर्ण श्रद्धा होनी चाहिये। ऐसा करके व वैदिक शिक्षाओं, मान्यताओं व सिद्धान्तों के अनुसार आचरण करके हम अधिकांशतः सुखी हो सकते हैं।

 वेदों का अध्ययन करने से ईश्वर के सच्चे स्वरूप का ज्ञान भी अध्येता को होता है। ईश्वर का ज्ञान होने पर बोध होता है कि ईश्वर अनन्त काल से हम पर असंख्य उपकार करता चला आ रहा है। ईश्वर के उन उपकारों का ऋण हम कदापि चुका नहीं सकते। इसके लिए वेद और हमारे ऋषि मुनि वैदिक मान्यताओं के अनुरूप ईश्वर के ध्यान व चिन्तन का विधान करते हैं जिसके अन्तर्गत मनुष्य को प्रातः व सायं की दो सन्धि वेलाओं में ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना करनी होती है। इसे **‘सन्ध्या’** कहते हैं। इसमें सहायता के लिए ऋषि दयानन्द ने पंचमहायज्ञ विधि नाम से एक लघु ग्रन्थ की रचना की है जिसमें सन्ध्या का विघान व विधि दी गई है। इसे कोई भी हिन्दी जानने वाला मनुष्य कर सकता है। पंचमहायज्ञविधि की पद्धति से सन्ध्या कर ईश्वर के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन कर साधक वा मनुष्य ईश्वर की कृपा रूप में सुख व कल्याण करने वाली प्रेरणायें प्राप्त कर सकता है। यह स्तुति, प्रार्थना व उपासना ही सच्ची ईश्वर की पूजा है। यह भी जानना चाहिये कि ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वव्यापक, निराकार, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान व अविनाशी है। वह हमारे हृदय में स्थित हमारी आत्मा के भीतर व बाहर सर्वत्र विद्यमान है। यदि हम शरीर से बाहर ईश्वर को जान व मानकर उपासना करेंगे तो ईश्वर की प्राप्ति होना सम्भव नहीं है क्योंकि हमारी आत्मा शरीर के भीतर है। अतः ईश्वर की उपासना आत्मा द्वारा आत्मा के भीतर ही ईश्वर की अनुभूति करते हुए उसका ध्यान व चिन्तन करते हुए करना ही सम्भव है। ऐसा करके ही स्तुति, प्रार्थना व उपासना के फल ईश्वर से प्रीति, ईश्वर के ध्यान से बुरी आदतों का छूटना व ईश्वर के गुण, कर्म व स्वभाव के समान जीवात्मा के गुण, कर्म व स्वभाव का बनना होता है। इससे सर्वशक्तिमान ईश्वर के सहाय का प्राप्त होना भी सम्भव होता है। अतः सबको वेदाध्ययन व वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन करते हुए प्रातः व सायं सन्ध्या अवश्य करनी चाहिये जिससे जीवात्मा के दुर्गुण व दुःख आदि दूर होकर जीवात्मा सदगुणों व सुखों से युक्त हो सके। सन्ध्या ही सच्ची व यथार्थ ईश्वर की पूजा है यह विश्वास ईश्वर की पूजा व उपासना करने वाले मनुष्यों को दृढ़ता से होना चाहिये।

 संसार की तीन सत्ताओं में एक जड़ प्रकृति है जिससे ईश्वर ने यह भौतिक जगत बनाया है। इस जगत में अग्नि, वायु, जल, आकाश और पृथिवी आदि 33 देवता हैं। अन सबमें उपासनीय केवल ईश्वर है व हमारे माता-पिता, आचार्य व उनके समान व्यक्ति हैं। जड़ पदार्थ के यथार्थ गुणों को जानना, उनसे यथावत् उपयोग लेना व उनका अल्पज्ञानियों में उपदेश व प्रचार ही उन पदार्थों की स्तुति होती है। यह कार्य हमारे आचार्य और वैज्ञानिक भली प्रकार करते हैं। जड़ पदार्थों से प्रार्थना करने से न तो वह सुन सकते हैं और जब वह सुन ही नहीं सकते तो उस प्रार्थना का फल भी उनसे प्राप्त नहीं हो सकता। प्रार्थना तभी सार्थक व सफल होती है जब वह अपने से अधिक किसी सामर्थ्यवान चेतन सत्ता से की जाये। इसमें प्रथम स्थान पर तो ईश्वर ही है और इतर देवताओं में माता, पिता, आचार्य एवं बन्धुगण आदि अनेक मनुष्य हो सकते हैं। अतः हमें ईश्वर से ही प्रार्थना करनी चाहिये जिससे वह सब पूरी हो सकें। जो प्रार्थनायें माता, पिता, आचार्यमण आदि पूरी कर सकते हैं, वह प्रार्थनायें इनसे ही करनी चाहिये। ईश्वर के हमारी आत्माओं के भीतर विद्यमान होने से उसकी उपासना तो हर पल व हर क्षण होती रहती है व की जा सकती है। अन्य चेतन देवता माता, पिता, आचार्य आदि की यथासमय उपासना आदि की जा सकती है व करनी भी चाहिये। यह भी ध्यान रहे कि ईश्वर को हमसे किसी पदार्थ व सेवा आदि की आवश्यकता नहीं है जबकि हमारे माता, पिताओं व आचार्यों को होती है। अतः हमारा कर्तव्य है कि हम अपने माता, पिता व आचार्यों की तन, मन व धन से श्रद्धापूर्वक सेवा सुश्रुषा करें।

 अग्निहोत्र में हम जड़ देवताओं का पूजन व सत्यक्रियाओं द्वारा उनका शोधन व गुणवर्धन के साथ उन्हें हानि न पहुंचे इसका ध्यान रखते हैं। संसार में हमारे लिए प्राणों व अन्न आदि का सर्वाधिक महत्व है। अग्निहोत्र यज्ञ करने से सभी जड़ पदार्थ पुष्ट व लाभान्वित होते हैं। अग्निहोत्र से वायु शुद्धि का प्रत्यक्ष व प्रमुख लाभ होता है। वायु में घृत व यज्ञ सामग्री के प्रक्षेपण व उनके प्रज्वलन से जो शुद्ध प्राण वायु उत्पन्न होती है उसमें श्वांस लेने से मन व स्वास्थ्य को लाभ होने के साथ अनेकानेक रोगों की निवृत्ति व बचाव भी होता है। वायु के शुद्ध होने से आकाशस्थ वायु व जल दोनों शुद्ध होते हैं। शुद्ध जल वा वर्षा से कृषि उत्पाद, वनस्पतियां व ओषधियां आदि भी शुद्ध व पवित्र उत्पन्न होती है जिससे मनुष्य के स्वास्थ्य को लाभ सहित उसके बल व शक्ति में वृद्धि होती है। अग्निहोत्र से पुरोहित जी आदि विद्वानों की संगति होने से नये नये ज्ञान विज्ञान की उपयोगी बातों की जानकारी भी यज्ञकर्ता को प्राप्त होती है। ऐसे अनेकानेक लाभ यज्ञ की पुस्तकों व ग्रन्थों में उपलब्ध है। यज्ञ ऐसा कर्म है जिसका लाभ इस जीवन में तो होता ही है, परजन्म में भी यज्ञ का लाभ मिलता है जिनका सत्शास्त्रों में विधान है। जहां यज्ञ होता है उससे पवित्र वायु चारों ओर फैलता वा दूर दूर जाता है और वहां प्राणियों व मनुष्यों को श्वांस के द्वारा लाभान्वित करता है। इसका पुण्य भी यज्ञकर्ता को जन्म-जन्मान्तर में मिलता है। यज्ञ में वेदमन्त्रों का उच्चारण करने से ईश्वर की नाना प्रकार से स्तुति व प्रार्थनायें होती हैं जो अनर्थक न होकर सार्थक व समयानुसार पूर्ण होती हैं। इस प्रकार प्रातः व सायं सूर्यास्त के समय व सायं सूर्यास्त से पूर्व किया जाने वाला अग्निहोत्र भी गृहस्थी व अन्य यज्ञ करने वाले सभी मनुष्यों को समान रूप से लाभ पहुंचाता है। इस अग्निहोत्र को करने से जड़ दवेताओं को लाभ होता है व हम जो प्राकृतिक पदार्थों का भोग करते हैं, उससे एक सीमा तक हम उऋण होते हैं। यह भी जान लें कि यज्ञ देवपूजा, संगतिकरण व दान को कहते हैं। देवपूजा में अग्निहोत्र आ जाता है। यज्ञ में विद्वानों के आगमन से उनसे संगतिकरण होने से हमें नाना प्रकार से लाभ होते हैं। दान न केवल धन अपितु श्रेष्ठ गुणों के आदान प्रदान को भी कहते हैं। इस दान से व्यक्ति, समाज व राष्ट्र का महान उपकार होता है। यह यज्ञ की महनीयता को भी प्रदर्शित करता है। पाठकों को यज्ञ विषयक ग्रन्थों को पढकर इनके लाभों से सुपरिचित होना चाहिये तभी वह यज्ञ करके लाभान्वित हो सकेंगे।

 इस संक्षिप्त जानकारी के साथ ही हम लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**